Vol.11 November'17 No.4
Annual Subscription : Rs 100
Rs. 10/- per copy

ब्रह्मार्पण

BRAHMARPAN

वेदोऽखिलो धर्ममूलम्

A Monthly publication of Brahmasha India Vedic Research Foundation

Brahmasha India Vedic Research Foundation
ब्रह्माशा इंडिया वैदिक रिसर्च फाउन्डेशन

जगमग जगमग

–सोहनलाल द्विवेदी

हर घर, हर दर, बाहर, भीतर,
नीचे ऊपर, हर जगह सुघर,
कैसी उजियाली है पग–पग?
जगमग जगमग जगमग जगमग

छज्जों में, छत में, आले में,
तुलसी के नन्हें थाले में,
यह कौन रहा है दृग को ठग?
जगमग जगमग जगमग जगमग

पर्वत में, नदियों, नहरों में,
प्यारी–प्यारी–सी लहरों में,
तैरते दीप कैसे भग–भग!
जगमग जगमग जगमग जगमग

राजा के घर, कंगले के घर,
हैं वही दीप सुंदर सुंदर!
दीवाली की श्री है पग–पग,
जगमग जगमग जगमग जगमग

पूर्ण अभीप्सा

–महात्मा चैतन्यमुनि

प्रभो!
मैं तो समर्पण ही कर सकता हूँ
मेरे हाथ में तो यही है
पूर्ण अभीप्सा
आन्तरिक याचना
समग्रतायुक्त प्रार्थना।
मैंने जान लिया है
तुम्हारे सौन्दर्य के समक्ष
सब–कुछ फीका है
आपके अभाव में जीवन–घट
रीता है....
नहीं कुछ और चाहना–
बस केवल तुम्हें चाहता हूँ
अब तो तुम लगने लगे हो
अपने प्राणों से प्यारे।
लौकिकता से उपराम हूँ
हर क्षण ही समग्र–ध्यान हूँ।
अपने अक्षय भंडार से
मुझे ओज दो
तेज दो
दिव्य प्रेम दो
ज्ञान दो
समरसता और शान्ति दो
आनन्द दो....
मन्त्रवित् नहीं
आत्मविद् हो जाऊँ
तुम्हारी अनन्तता का स्पर्श पाऊँ
दिव्यता... उत्कर्ष पाऊँ......

महादेव, सुन्दरनगर
जिला मण्डी, हि.प्र.–175019

BRAHMASHA INDIA VEDIC RESEARCH FOUNDATION

C2A/58, Janakpuri,
New Delhi-110058
Tel :- 25525128, 9313749812
*email:*deeukhal@yahoo.co.uk
brahmasha@gmail.com
Website : www.thearyasamaj.org
of Delhi Arya Pratinidhi Sabha

Sh. B.D. Ukhul
Secretary
Dr. B.B. Vidyalankar 0124-4948597
President
Col.(Dr.) Dalmir Singh (Retd.)
V.President
Dr. Mahendra Gupta *V.President*
Ms. Deepti Malhotra
Treasurer
Editorial Board
Dr. Bharat Bhushan Vidyalankar, Editor
Dr. Harish Chandra
Dr. Mahendra Gupta
Acharya Gyaneshwararya

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्याय क्षेत्र दिल्ली ही होगा।

Printed & Published by
B.D. Ukhul for Brahmasha India Vedic Research Foundation
Under D.C.P.
License No. F2 (B-39) Press/ 2007
R.N.I. Reg. No. DELBIL/ 2007/22062
Price : Rs. 10.00 per copy
Annual Subscription : Rs. 100.00

Brahmarpan November'17 Vol. 11 No.4
कार्तिक-मार्गशीर्ष 2074 वि.संवत्

ब्रह्मार्पण
BRAHMARPAN

A bilingual Publication of Brahmasha India Vedic Research Foundation

CONTENTS

1.A. जगमग जगमग 2
-सोहनलाल द्विवेदी
1.B. पूर्ण अभीप्सा 2
-महात्मा चैतन्यमुनि
2. संपादकीय 4
3. सांख्य दर्शन 7
-डॉ. भारत भूषण
4. एक दीपक बुझ गया लाखों दीपक जलाकर 9
-डॉ. सुमेधा विद्यालंकार
5. विश्व में कैसे-कैसे ज्योति पर्व 14
6. सांस्कृतिक आलोक का प्रतीक दीपावली पर्व 15
-अशोक कौशिश
7. श्रीराम-भरत का भ्रातृ-प्रेम 19
-सुमित्रा मित्तल
8. आदित्य ब्रह्मचारी योगीराज ऋषि दयानन्द के प्रति 22
अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द के हृदयोद्गार
-आचार्य दिनेशचन्द्र शास्त्री
9.1. बापू थे समय के पाबन्द 24
9.2. बापू का त्याग का संदेश 25
-मुकेश शर्मा
10.1. गरीबी में स्वाभिमान 26
(लालबहादुर शास्त्री-एक प्रसंग)
-मुकेश शर्मा
10.2. अंग्रेजी में फेल 27
(शास्त्री जी का स्वाभिमान
-विनोद कुमार यादव
11. रामायण:संस्कृति की विजय-गाथा 28
-स्व. स्वामी सत्यम
12. INTERNATIONAL ARYA MAHA SAMMELAN 32
-B.D. Ukhal
13. कन्याएँ कितनी महिमामयी 35
-प्रियवीर हेमाइना

संपादकीय

तमसो मा ज्योतिर्गमय

मन के अंधकार को दूर कर ज्ञान की ज्योति जला दो। दीपावली हमारा सबसे पावन पर्व है। यह शरद ऋतु की कार्तिक मास की अमावस्या को मनाया जाता है। इसके एक पखवाड़े के बाद मार्गशीर्ष का सुखद महीना आरंभ होता है। गीता में "मासानां मार्गशीर्षोऽहम्" कह कर इसका महत्त्व बताया गया है। इस समय ग्रीष्म ऋतु की गर्मी समाप्त हो जाती है।

खेतों में धान, मक्का, ज्वार, बाजरा तिल, उड़द, मूँग आदि दलहन की फसलें पककर तैयार खड़ी होती हैं जिससे कृषक वर्ग का मन आनन्द की हिलौरें ले रहा होता है। खेतों से ईख कट कर कोल्हू में आने लगती है।

घरों की स्वच्छता – आज देश में चारों ओर सफाई अभियान की धूम है। दीपावली पर लोग घरों की सफाई करते हैं। घर में जमा कूड़े–कचरे और कबाड़ को फेंक कर घरों को स्वच्छ करते हैं।

दीपावली पर विशेष पकवान मनाए जाते हैं जिन्हें इष्ट–मित्रों और बंधु–बान्धवों के साथ मिल–जुल कर खाते हैं। इससे परस्पर स्नेह में वृद्धि होती है।

लोग विभिन्न त्योहारों पर विभिन्न देवियों की आराधना करते हैं। ये हमारी समृद्धि की सूचक है। वसन्त पंचमी पर विद्या की देवी सरस्वती की, दशहरे पर दुर्गा की जो शस्त्रों की आरध्य देवी हैं तथा दीपावली पर समृद्धि की देवी लक्ष्मी की आराधना करते हैं।

दीप–प्रज्वलित करते हैं – लोग यज्ञ–हवन और लक्ष्मी की पूजा–अर्चना के बाद घर के अन्दर–बाहर दीपमालाएँ जलाते

हैं। कुछ लोग रंग-बिरंगे कंदील बनाकर उनमें दीप जलाकर टाँगते हैं। दीपक जैसे अमावस्या की घनी अंधेरी रात को आलोकित कर देते हैं वैसे ही दीपावली हमारे मन के अंधेरे को दूर कर देती है। लोग अपने मानसिक आह्लाद को आतिशबाजी चलाकर प्रकट करते हैं। बच्चे फुलझड़ियाँ छोड़ते हैं तो बड़े अग्निवाण, अनार, बम आदि चलाते हैं।
प्रदूषण से हानि-दीपावली पर आनंद मनाने के लिए हम पटाखे छोड़ते हैं। धीरे-धीरे वैज्ञानिक प्रगति के साथ आतिशबाजी भी अनेक प्रकार की आने लगी है इनसे अत्यधिक प्रदूषण होता है। इससे अस्थमा के रोगियों का दम घुटने लगता है। आजकल शहरों में वैसे भी प्रदूषण बहुत होता है। पटाखों से वह और भी बढ़ जाता है। बमों आदि की विस्फोटक आवाज से ध्वनि प्रदूषण भी बढ़ जाता है। इससे बच्चों के बहरे होने का भी खतरा होता है। इस अवसर पर शहर में कई स्थानों पर आग भी लग जाती है जिससे जान-माल का नुकसान होता है। अतः सीमित मात्रा में ही पटाखे चलाने चाहिए।
जुआ और चोरी - आज लोग लक्ष्मी की पूजा करते हैं वे आशा करते हैं कि जैसे भी हो घर में लक्ष्मी का आगमन होना चाहिए। इसके लिए वे जुआ खेलते हैं। प्रायः जुए में धन बहुत कम लोगों को मिलता है, अधिकतर लोग जुए में हारते ही हैं और जुए में यदि धन मिलता भी है तो वह विनाशकारी होता है। दूसरी ओर धन की लालसा में दीवाली पर चोर बड़े उत्साह और आशा से चोरी करने को निकलते हैं कि आज माल हाथ लग जाए तो सारा साल गुजरेगा। परन्तु होता उलटा ही है अधिकांश लोग जेल जा पहुँचते हैं।

आज एक दीप बुझ गया – दीपावली के दिन सन् 1883 को ऋषि दयानन्द का निर्वाण हुआ था। 142 वर्ष बाद आज आर्यसमाज अपने कार्य में प्रगति पर है यद्यपि प्रायः साप्ताहिक सत्संगों में अधिकांश समाजों में उपस्थिति कम रहने लगी है। इसके लिए हमें सत्संगों के कार्यक्रमों को अधिक आकर्षक बनाना होगा ताकि युवा वर्ग उनमें सोत्साह भाग ले सके। गुरुकुलों की संख्या में धीरे-धीरे वृद्धि हो रही है उन्हें सुनियोजित ढंग से चलाने के लिए व्यावसायिक दृष्टिकोण अपनाना होगा। जिस भावना से स्वामी श्रद्धानन्दजी ने गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना की और उसका संचालन किया वही भावना आज की संस्थाओं के संचालन में भी होनी चाहिए। आज गुरुकुल कांगड़ी के स्वरूप में भी बदलाव की आवश्यकता है। उसके आदिम स्वरूप के पुनर्निर्माण की आवश्यकता है। उसकी आश्रम व्यवस्था के पुनरुद्धार के लिए प्रयत्न होना चाहिए। महर्षि की शिक्षा के क्षेत्र में क्रांति लाने की इच्छा तभी पूरी हो सकती है जब हम उनके बताए आदर्शों पर चल कर समन्वित शिक्षा प्रणाली लागू करेंगे।

संपादक

उत्थान

• आध्यात्मिक प्रगति के लिए व्यक्ति को अपनी हर मान्यता को उधेड़-उधेड़ कर देखना पड़ता है, उनकी प्रमाणों से चीरफाड़ करनी पड़ती है, तभी गलत मान्यतायें शिथिल होती है व सही मान्यताएँ दृढ़ हो पाती हैं।

• मन में कामादि विकार न आने देने का एक उपाय यह भी है कि स्वयं को हमेशा उत्तम कार्यों में व्यस्त रखना, महान् लक्ष्य बनाकर उसकी पूर्ति के लिए प्रयत्नशील रहना।

सांख्य दर्शन (अध्याय-1, सूत्र-117)

-डॉ. भारत भूषण विद्यालंकार

समस्त शरीरों में एक-आत्मा मानने पर भी विरुद्ध धर्म प्रतीति की व्यवस्था की जा सकती है। वह यह कि प्रत्येक शरीर के साथ जो अन्तःकरण रहता है उसी में सारी विविधताएँ चलती हैं। मरना-जीना, सुख-दुख, बन्ध-मोक्ष आदि सब अन्तःकरण में ही होते हैं। आत्मा में उनका आरोप कर लिया जाता है। इस प्रकार एक ही आत्मा मानने पर अन्तःकरण नाना होने से सब व्यवस्था हो जाएगी। सूत्रकार अगले सूत्र में इसका समाधान करता हैः सूत्र है-

अन्यधर्मत्वेऽपि, नारोपात् तत्सिद्धिरेकत्वात्।।118।।

अर्थ-(अन्यधर्मत्वेऽपि) अन्य (अन्तःकरण आदि) का धर्म होने पर भी (आरोपात्) आरोप से (तत्सिद्धिः) व्यवस्था की सिद्धि (न) नहीं (एकत्वात्) [आत्मा के] एक होने से।

सुख-दुःख आदि को अन्य (अन्तःकरण) का धर्म मानने पर और आत्मा में उनका आरोप मान लेने से भी उचित व्यवस्था की सिद्धि नहीं हो सकती क्योंकि आत्मा एक होने से एक ही समय में वह सुख-दुःख आदि को उसी का धर्म मानकर भी व्यवस्था नहीं बन सकती। प्रत्येक अन्तःकरण में एक समय में विविध सुख-दुःख तथा अन्य भावनाओं का उदय होता रहता है तथा प्रत्येक अन्तःकरण में वही आत्मा उपाहित है क्योंकि वह एक ही है। सारे अन्तः-करणों के सारे सुख-दुःख आदि का एक समय में आत्मा में आरोप होगा। यदि आत्मा उससे प्रभावित होती तो उसे सुखी-दुःखी, बद्ध-मुक्त आदि क्या माना जाएगा? और इस तरह के प्रभाव में उसकी स्थिति क्या होगी? यदि आत्मा उससे प्रभावित नहीं होती तो उसका अस्तित्व ही अनावश्यक है। यदि अन्तःकरणों के सुख-दुःख आदि के लिए उनका

अस्तित्व अपेक्षित है तो वह केवल उनके लिए साधन मात्र बनकर रह जाता है जो आत्मा को उसके वास्तविक स्थान से गिरा देता है और ऐसा मानने पर सांख्य का यह सिद्ध ान्त भी नष्ट हो जाता है कि बुद्धि और सारे प्राकृतिक पदार्थ परार्थ अर्थात् आत्मा के लिए हैं। आपकी कहीं इस स्थिति में तो आत्मा ही बुद्धि आदि के लिए साधन बन जाती है जबकि आप समस्त सुख-दुःख आदि भोग बुद्धि में मानकर उसको इस योग्य बनाने के लिए आत्मा का अस्तित्व स्वीकार करते हैं। अतः सारे शरीरों में आत्मा को एक मानकर जन्म-मरण, सुख-दुःख आदि विविधता की व्यवस्था बुद्धि आदि अन्तःकरण द्वारा संभव नहीं।।118।।

दी हिबिस्कस,
बिल्डिंग-5, एपार्ट नं.-9बी
सेक्टर-50, गुड़गाँव (हरियाणा) 122009
फोन-0124-4948597

कुछ तथ्य

• श्रेय मार्ग की ओर परिश्रम करने वाला ही प्रेय मार्ग से बच सकता है, अन्य नहीं। श्रेय मार्ग का परिश्रम ढीला होने पर भी व्यक्ति प्रेय मार्ग की ओर बढ़ जायेगा।

• जो साधक अति परिश्रम-तपस्या-अनुशासन में नहीं रहा है, वह भौतिकवाद की आँधी से टक्कर लेना नहीं जानता है वह समाज में जाते ही कुछ दिनों में योग को छोड़ देगा और भोगी बन जायेगा।

• जो यह कहते है कि हम मोक्ष नहीं चाहते, उनका यह कथन उचित नहीं है, क्योंकि मोक्ष प्राप्ति अर्थात् पूर्ण दुःख से छुटना सभी चाहते हैं।

एक दीपक बुझ गया लाखों दीपक जलाकर

–डॉ. सुमेधा विद्यालंकार

प्रत्येक व्यक्ति का अपना एक व्यक्तित्व होता है जिसके कारण वह अन्य मनुष्यों से अलग पहचाना जाता है। वही उसकी पहचान कहलाती है। महर्षि दयानन्द सरस्वती ऐसे महापुरुष हुए हैं जिनकी चिन्तनधारा में हमें जीवन के समस्त पहलुओं पर सटीक और स्पष्ट निर्देश मिलते हैं। उनकी विचारधारा में जो सार्वदेशिकता दिखाई देती है और जो समय की परिधि में नहीं बाँधी जा सकती, वह इस चिन्तनधारा को और अधिक उत्कृष्टता प्रदान करती है।

महर्षि ने केवल एक ही दिशा में कार्य नहीं किया अपितु सभी क्षेत्रों में अपनी दृष्टि डाली। उन्होंने जहाँ एक ओर धार्मिक तथा सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध आवाज उठाई, वहीं दूसरी ओर वेदों का पुनरुद्धार भी किया। ऋषि दयानन्द ने वेदमन्त्रों के जैसे राष्ट्रपरक अर्थ किए हैं, उससे कहा जा सकता है कि वे राष्ट्रभक्त और वेदभक्त साथ-साथ हुए। उनका राष्ट्रप्रेम उनके धर्म का अंग रहा।

महर्षि दयानन्द प्रमुख रूप से एक धार्मिक व्यक्ति थे। परन्तु उन्होंने धर्म की जो व्याख्या की है वह किसी मनुष्य द्वारा स्थापित मत या सम्प्रदाय का वाचक न होकर मानव की सर्वांगीण उन्नति में सहायक उन गुणों का नाम है जिनके कारण सच्ची मानवता का विकास होता है। उनके कथनानुसार धर्म वह है जो सत्य से युक्त है, न्याय की भावना से ओतप्रोत है और जो पक्षपात से रहित है। उनकी दृष्टि में धर्म किन्हीं बाह्य कर्मकाण्डों का पुंज नहीं है अपितु धैर्य, क्षमा, इन्द्रिय संयम, सत्य आदि मानवीय गुण ही हमें सच्चा धार्मिक बनाते हैं। धर्म की परिभाषा में **'वसुधैव कुटुम्बकम्'** के आदर्श को जोड़ा है। इसके साथ ही धर्म और सत्य को एक दूसरे का पर्यायवाचक भी कहा। सत्य पर बहुत बल देते हुए कहा 'असत्य का सम्भाषण और समर्थन करना मेरे लिए असंभव है। सत्य मेरा बनाया हुआ नहीं है, वह सनातन है और ईश्वर का

है। उस सत्य को यथावत् प्रकट करने में मैं किसी से, किंचित्मात्र भी भयभीत नहीं होता।'

स्वामीजी का मुख्य कार्य समाज में व्याप्त पाखण्ड को नष्ट करके सत्य अर्थ का प्रकाश करना था, जिसके लिए वे जीवन भर लगे रहे। इसके लिए उन्होंने प्रचार के क्षेत्र को अपनाया। घूम-घूमकर अवैदिक मान्यताओं के विरूद्ध प्रचार किया। धार्मिक तथा सामाजिक कुरीतियों पर प्रहार करके निरंकार सर्वव्यापक ईश्वर के सिद्धान्त को अपना मूलभूत मन्तव्य प्रतिपादित किया। इस मत का प्रचार करने में महर्षि ने अपना सारा जीवन लगा दिया। उनका कथन था कि प्रतिमा को ईश्वर मानने से वह सच्चिदानन्द और अखण्ड कैसे सिद्ध हो सकती है।

महर्षि दयानन्द का दूसरा क्षेत्र सामाजिक क्षेत्र में क्रान्ति लाना था। हमारा समाज उन दिनों अनेक प्रकार की कुरीतियों से जकड़ा हुआ था। जहाँ एक ओर बाल विवाह, सती प्रथा तथा महिलाओं को शिक्षा का अधिकार जैसी कुरीतियाँ न देना थीं, वहीं पर दूसरी ओर सामाजिक एवं राष्ट्रीय एकता का नितान्त अभाव था। समाज ऊँच-नीच तथा जातिवाद की संकुचित धाराओं में जकड़ा हुआ था। महर्षि ने इन समस्त कुरीतियों पर दृढ़ता से कुठाराघात किया। 'नारी नरकस्य द्वारम्' का ढोल पीटकर उनके लिए वेद का द्वार बन्द किया हुआ था तब स्वामी जी ने 'यथेमां वाचं कल्याणीमावदानी जनेभ्यः' यजुर्वेद के इस मन्त्र की घोषणा करते हुए नारी को वेदाध्ययन का अधिकारी ठहराया।

सामाजिक दृष्टि से उन्होंने वर्णाश्रम व्यवस्था का समर्थन किया, किन्तु वर्ण-व्यवस्था को गुण, कर्म तथा स्वभाव के अनुसार स्वीकार किया।

'जन्मना जायते शूद्रः संस्कारात् द्विज उच्यते। महर्षि ने यह स्पष्टीकरण किया कि वकील का बेटा जन्म से वकील नहीं होता, डॉक्टर का बेटा जन्म से डॉक्टर नहीं होता। इसी तरह कोई जन्म से ब्राह्मण नहीं होता, विद्याध्ययन, तपस्या, आदि से

ब्राह्मण होता है। जाति का उपयोग व्यक्ति को प्रेरित करने के लिए होना चाहिए।

दयानन्द जी की विशेषता उनका राष्ट्रवाद है। वे व्यक्ति को केवल व्यक्तिगत जीवन की परिधि तक ही सीमित रखना नहीं चाहते थे। व्यक्ति समाज का अविच्छिन्न अंग है। व्यक्ति, समाज और राष्ट्र तीनों अन्योन्याश्रित हैं। ये तीनों उनके मन में सदा एक साथ उपस्थित रहे। उन्होंने आर्यसमाज की जो स्थापना की, यह वेदवाद और राष्ट्रवाद आर्यसमाज को स्वामी जी से विरासत में मिला। स्वामी जी ने राष्ट्र का कल्याण करने के लिए अपने सारे सुख त्याग दिए। अपने देश की पराधीनता से गहरी मानसिक वेदना ऋषि को होती थी। उन्होंने स्वराज्य प्राप्त करने के लिए और राष्ट्रीय स्वाभिमान जागृत करने के लिए महत्त्वपूर्ण प्रयास किया। वे राष्ट्र की एकता, अखण्डता की रक्षा के लिए जीवन भर लगे रहे। उन्होंने राष्ट्र की चेतना की अलख जगाई और देश को स्वाधीन बनाने का संकल्प लिया। महर्षि ने राजनीति में स्वराज्य का, संस्कृति में स्वभाषा का, धर्म में सर्व धर्म वेद का तथा अर्थनीति में स्वदेशी का समर्थन किया। प्रत्येक क्षेत्र में स्व का समर्थन ही उनका राष्ट्रवाद है। इस प्रकार उन्होंने स्वाधीनता की नींव डाली।

जिस क्षेत्र में महर्षि दयानन्द सरस्वती जी और आर्यसमाज की अत्यधिक देन है वह हिन्दी भाषा और साहित्य को उनका योगदान है। गुजराती होते हुए भी उन्होंने हिन्दी में वेदभाष्य करके परमात्मा की अमरवाणी का शुद्ध स्वरूप प्रस्तुत किया। इसके अतिरिक्त ऋषि ने छोटे-बड़े अनेक ग्रन्थ लिखे। अपने ग्रन्थों के द्वारा हिन्दी भाषा को दिशा दी तथा उसे राष्ट्रभाषा के पद पर प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया। ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका, सत्यार्थप्रकाश, संस्कार विधि, ये तीनों ही ग्रन्थ विभिन्न दिशाओं में हमारे पथ-प्रदर्शक हैं। इनमें ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका महर्षि की विद्वता तथा उनके वेद सम्बन्धी विचारों का प्रतिरूप है। संस्कार विधि मुख्य रूप से कर्मकाण्ड की परिचायक है। तथा सत्यार्थप्रकाश-सत्य अर्थ का प्रकाश - इसके नाम से ही

प्रतीत होता है कि यह ग्रन्थ स्वामी जी के चिन्तन और सुविस्तृत ज्ञान का प्रतिनिधि है। सत्यार्थप्रकाश अद्वितीय ग्रन्थ है। सत्य अर्थ जो पाखण्ड में तिरोहित हो चुका था, उस पाखण्ड रूपी अंधकार को छिन्न-भिन्न करके सत्य के सूर्य का प्रकाश करना इस ग्रन्थ का उद्देश्य है। ईश्वर, धर्म, शिक्षा, राजनीति, सामाजिक दुर्दशा, मोक्ष आदि सभी विषयों पर महर्षि ने इस ग्रन्थ में सत्य पर प्रकाश डाला है।

स्वामी दयानन्द ने धर्मभ्रष्ट किए गए लोगों के लिए शुद्धि का कार्य किया। पश्चिमी सभ्यता में रंगे लोगों को भारतीय संस्कृति का पाठ पढ़ाया। उन्होंने दलितोद्धार, छुआछूत का खण्डन, ध ार्मिक सुधार, राजनैतिक सुधार, बाल-विवाह और सतीप्रथा का निवारण, शिक्षा का प्रचार आदि सभी कार्यों के लिए अथक प्रयास किया।

दीपमालिका हमारा पवित्र पर्व है। जहाँ अत्याचारी रावण को मारकर 14 वर्ष के वनवास के बाद श्रीराम के आगमन की प्रसन्नता में सामूहिक दीपमालिका और मनोरंजन का अवसर था। वहाँ इसी दिन वैदिक संस्कृति, स्वराज्य और मानवता के उद्धारक महर्षि दयानन्द सरस्वती का निर्वाण दिवस है। उनके लोकोत्तर चरित्र से हमें प्रेरणा ग्रहण करनी चाहिए कि व्यक्ति की अज्ञान, पराधीनता एवं विषमता के अन्याय-अत्याचार का उन्मूलन करने के लिए केवल प्रार्थना न कर स्वाबलम्बन एवं संगठन के लिए प्रयत्नशील हों। महर्षि ने निरन्तर पदयात्रा करके अपने समय में पाखण्ड खण्डिनी पताका फहराई, मानव मात्र की समुन्नति के लिए अपने प्रयत्नों से अभूतपूर्व सामाजिक सांस्कृतिक क्रान्ति की। उनका एकमात्र लक्ष्य था- लेखनी और वाणी द्वारा देश के प्राचीन गौरव की प्रतिष्ठा और देशोद्धार के द्वारा विश्व शान्ति की स्थापना। वे भारतीय संस्कृति और भारत की उदात्त परम्पराओं को देश देशान्तरों और द्वीप-द्वीपान्तरों में प्रचारित और प्रसारित करना चाहते थे। स्वामी जी के द्वारा प्रतिपादित आर्यसमाज के दस नियम किसी एक पंथ के संस्थागत नियम न होकर मानवता के उत्थान, अभ्युदय और

एकता के मार्गदर्शक सिद्धान्त हैं। वे राष्ट्र के आर्थिक निर्माण में गोरक्षा, स्वदेशी की महत्ता पर निरन्तर बल देते थे और स्त्रियों को जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उनकी गरिमा प्रतिष्ठित करना चाहते थे। दलितोद्धार को राष्ट्र के लिए संजीवनी समझते थे।

अपनी छोटी सी आयु में महर्षि जो कार्य कर गए, वह अपूर्व एवं अनुपम हैं। हर क्षेत्र में उन्होंने जो कार्य किया, उससे देश में नया स्वाभिमान जागा, भारतीय राष्ट्रीयता के क्षेत्र में अपूर्व जागृति हुई। स्वामी जी में क्षमा दान की भावना अद्‌भुत थी। मूर्तिपूजा का खण्डन करने पर एक साधु उनको प्रतिदिन दुर्वचन कहा करता था, इसके बदले उसे मीठों आमों को प्रदान करके सच्चे शिव का बोध कराया। उनके सिद्धान्तों का विरोध करने वाले विद्रोहियों ने स्वामी जी पर आघात करने के लिए उन पर जिन्दा सर्प फेंके। उनको कई बार विष पिलाया गया। उन्होंने अपने योग बल से इनका निराकरण किया, परन्तु अन्त में अपने रसोइए जगन्नाथ जैसे पापी द्वारा उनकी जीवन लीला समाप्त हुई। महर्षि के निर्वाण को 135 वर्ष के लगभग हो रहे हैं, ऐसे में जहाँ हम उनके व्यक्तित्व के प्रति अपने श्रद्धासुमन प्रस्तुत करें वहाँ हमें इस अवसर पर यह मूल्यांकन भी करना चाहिए कि उनके द्वारा स्थापित आर्यसमाज के सवा सौ से अधिक वर्षों में क्या समाज उतना खरा यशस्वी रहा है जिसका महर्षि ने सपना संजोया था। स्वाधीनता संग्राम में और भारतीय पुनर्जागरण के शैक्षणिक, सामाजिक कार्यों और क्या आर्यजनों की यशस्विनी भूमिका रही है? परन्तु देश की जो वर्तमान दुरावस्था है, देश में जिस प्रकार का भ्रष्टाचार, स्वार्थों से परिपूर्ण राजनीति है, उसे देखते हुए आज आवश्यकता है आर्यसमाज और आर्यजन अपनी वही तेजस्विनी और स्वार्थहीन भूमिका प्रस्तुत करें, जैसी उन्होंने महर्षि के अवसान के बाद के पहले 50 वर्षों में प्रस्तुत की थी।

बी–22, गुलमोहर पार्क,
नई दिल्ली–49

विश्व में कैसे-कैसे ज्योति पर्व

दीपावली की रोशनी न सिर्फ हमारे घर और आसपास को बल्कि हमारे मन को भी प्रकाशित करती है। रोशनी कहीं न कहीं हमारी खुशी और जीत की भावना से जुड़ी है। यही वजह है कि ज्योति पर्व संसार के कई देशों में धूमधाम से मनाया जाता है। आइए, ऐसे कुछ आयोजनों पर नजर डालें:-

चीन-चीन की दिवाली है नेई महुआ। इसके दूसरे दिन से चीन में नए साल की शुरुआत मानी जाती है और इसी दिन से व्यापारी नए बही-खाते रखना शुरू कर देते हैं। इस मौके पर खूब रोशनी जलाई जाती है और आतिशबाजी की जाती है। घर के मुख्य द्वार के दोनों तरफ कागज की बनी मानव आकृतियाँ चिपकाई जाती हैं। वहाँ रंगबिरंगी रोशनी वाली लालटेन भी बनाई जाती है।

जर्मनी-यहाँ यह स्वास्थ्य का पर्व है। ऋतु परिवर्तन से हुए रोगों से छुटकारा पाने और बुरी ताकतों से बचने के लिए आतिशबाजी की जाती है और खूब रोशनी की जाती है। लोग एक दूसरे के लिए बेहतर स्वास्थ्य और लंबी आयु की कामना करते हैं। बर्लिन का चर्च खूब सजाया जाता है और कई तरह के अनुष्ठान भी किए जाते हैं।

म्यांमार-म्यांमार में भगवान बुद्ध के अवतरण दिवस के अवसर पर रोशनी करने और आतिशबाजी चलाने का चलन है। इस उत्सव को यहाँ तैगीच कहा जाता है। इस दिन लोग बौद्ध मठों में जाकर भगवान बुद्ध की पूजा करते हैं और फिर अपने घरों को रंग-बिरंगी रोशनियों से सजाते हैं।

दक्षिण कोरिया-वहाँ भगवान बुद्ध के जन्म दिवस पर एक लालटेन उत्सव मनाया जाता है। रंग-बिरंगी-रोशनी वाली लालटेनें गलियों, सड़कों में टाँगी जाती हैं। एक भव्य लालटेन जुलूस भी निकलता है। कोरियाई इन लालटेनों के प्रकाश को बुद्धि का प्रकाश मानते हैं।

सांस्कृतिक आलोक का प्रतीक दीपावली पर्व

–अशोक कौशिक

भारत का प्रत्येक प्राणी जन्मना ही 'भद्रकाम' है। हम नित्य–प्रति परमात्मा से प्रार्थना करते हैं– 'विश्वानि देव सवितु र्दुरितानि परासुव, यद् भद्रं तन्न आसुव।' अर्थात् प्रभो! हमारे सब दुरितों को दूर करो और जो हमारे लिए भद्र है, मंगलमय है, कल्याणकारी है, उसको हममें समाहित कर दो। प्रख्यात पुरुषार्थ चतुष्टय–'धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष' में भी मोक्ष को मुक्ति नहीं, छुटकारा नहीं, अपितु परमपद की प्राप्ति माना है। प्राणी की देह नश्वर है, आत्मा नहीं। आत्मा अजर है, अमर है। हमारा यह भद्रकामी देश और इसके देशवासी इसी पुरुषार्थ चतुष्टय की साधना के लिए नित्य प्रति पर्व एवं उत्सव का आयोजन करते हैं। वर्ष के 365 दिनों में वह कौन सा दिन है जिस दिन कोई पर्व न हो। पर्व, उत्सव और त्योहार हमें जीवन्तता प्रदान करते हुए हममें परस्पर स्नेह, सौहार्द, और सद्भावना का संचार करते हैं।

पर्वों की इस अटूट शृंखला में मुकुट–मणि का स्थान कदाचित् दीपावली को प्राप्त है। दीपावली मात्र एक पर्व अथवा त्यौहार नहीं अपितु पर्व पुंज है। कार्तिक कृष्णा एकादशी से प्रारम्भ कर गोवत्स द्वादशी, धन्वन्तरि त्रयोदशी, नरक चतुर्दशी एवं हनुमान जयन्ती, कमला जयन्ती एवं दीपावली, अन्नकूट–गोवर्धन–विश्वकर्मा प्रतिपदा और भ्रातृ अथवा यम द्वितीया तक, पूरे सात दिन तक, यत्र–तत्र सर्वत्र दीपमालिका का प्रकाश दृष्टिगोचर होता है। यह श्रेष्ठ पर्वपुंज भरतीय संस्कृति का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रसंग है। जिसमें आनन्द और प्रकाश की शाश्वत विजय का बड़ा मार्मिक इतिहास जगमगा रहा है।

'तमसो मा ज्योतिर्गमय' अर्थात् अन्धकार से प्रकाश की ओर चलने की प्रेरणा देने वाले इस पर्व में हमारी समस्त गतिमान संस्कृति का जाज्वल्यमान इतिहास प्रतिबिम्बित होता है। प्रतिवर्ष दीपमालिका के रूप में हम अपने इसी इतिहास और परम्परा की पुनरावृत्ति करते हैं।

यह पर्व एक ओर जहाँ हमारे व्यापक जीवन-दर्शन का ज्ञानोज्ज्वल प्रतीक है, वहीं यह उस रम्यलोक-कल्पना की भी अभिव्यक्ति है, जिसके अनुसार लक्ष्मी कार्तिक मास की अमावस्या को विष्णु की वैभवशाली शय्या को त्याग कर खेतों की हरी-भरी पगडंडियों पर, गाँवों की संकरी गलियों में भ्रमण करती हुई प्रत्येक किसान की कुटिया के द्वार पर जाकर आश्रय खोजती है। राज-लक्ष्मी के पूजन की अपेक्षा इसे हम सदैव जन-लक्ष्मी का ज्योति-पर्व के रूप में मानते आए हैं। लक्ष्मी समग्र रूप से पुरुषार्थ चतुष्टय की अधिष्ठात्री देवी है। उसकी अर्चना उपासना समाज के सभी अंगों के लिए अभ्युदय एवं निःश्रेयस का परम साधन मानी गई है। संसार में तेज को ही सार माना गया है। तेज ही 'श्री' का मुख्य स्वरूप है। तेज विहीन होने पर स्वयं मनुष्य हत-श्री कहलाता है। प्रभु ने हमें तीन तेज प्रदान किये हैं- सूर्य, चन्द्रमा और अग्नि। ज्योतिष शास्त्र के अनुसार कार्तिक मास में सूर्य के तुला राशि में स्थित होने के कारण वह निस्तेज हो जाता है और अमावस्या के दिन चन्द्रमा के तेज का सर्वथा अभाव हो जाता है। तब एकमात्र तृतीय तेज, अर्थात् अग्नि ही इस समय उपलब्ध रहता है। इस वैज्ञानिक तत्त्व के आधार पर दीपावली के दिन लक्ष्मी की उपासना में अग्नि की प्रमुखता मानी गई है।

कार्तिक अमावस्या के दिन ही धर्मराज यम ने जिज्ञासु नचिकेता को ज्ञान की अन्तिम वल्ली का उपदेश किया था। सावित्री को पुत्रवती होने का वरदान भी यम ने कार्तिक अमावस्या के दिन ही प्रदान किया था। इसी प्रकार यमरूपी अन्धकार के भीतर ब्रह्म-ज्ञान और अनन्त सौभाग्य के दो-दो पुण्य प्रसंगों का उद्गम हुआ। दीपोत्सव के साथ धर्मराज यम का यही सम्बन्ध है। जिसके अन्तराल में भारतीय संस्कृति की मूल आत्मा जगमगा रही है। मृत्यु स्रोत से अमरत्व एवं पुण्य जीवन का उद्रेक भारतीय संस्कृति का प्राण है। **'मृत्योर्मा अमृतं गमय।'**

दीपोज्ज्वलन के साथ ही यह दीप निर्वाण का भी पर्व है। ऐसा पुण्य पर्व, जो क्षण-भंगुर जीवन की अस्थिर दीप शिखायें बुझाकर भी महाकाश में ऐसी पुंजीभूत ज्योतियाँ विकीर्ण कर गया जिनसे मानवता जीवन प्राप्त कर सकी। पर्व-पुंज के उल्लेख में नरक-चतुर्दशी का उल्लेख किया गया है। प्राचीनकाल में घोर अत्याचारी नरकासुर ने इतना उत्पात मचाया हुआ था कि प्रजा त्राहि-त्राहि पुकार रही थी। प्रजा के त्राण के लिये सुदर्शन चक्रधारी श्रीकृष्ण महाराज ने इसी चतुर्दशी को उसे नरक की यात्रा पर प्रस्थित किया था। अतः नरक चतुर्दशी का यह पर्व नरकासुर से त्राण का पर्व प्रसिद्ध हुआ।

दीप-निर्वाण के प्रसंग में, अनुश्रुति के अनुसार महाभारत के अद्वितीय राजनेता, गीता-ज्ञान के अनन्य गायक, नरकासुर समेत शतशः राक्षसों से पीड़ित प्रजा के त्राण प्रदाता, योगेश्वर श्रीकृष्ण ने दीपावली के दिन ही अपना पार्थिव दीप बुझाकर आत्मा का अशेष दीप प्रज्वलित किया था। महात्मा बुद्ध के

विषय में भी यह विश्वास प्रचलित है कि उनका निर्वाण दीपावली के दिन ही हुआ था। क्रान्तदर्शी महर्षि दयानन्द ने भी दीपावली के दिन ही अपनी इह–लीला पूर्ण की थी। तीर्थराम से रामतीर्थ बने और कालान्तर में 'राम बादशाह' के नाम से प्रख्यात, स्वामी रामतीर्थ का स्वर्गारोहण भी दीपावली के दिन ही हुआ था।

मृत्यु और जीवन की सन्धि का यह समाहित प्रसंग, भारतीय संस्कृति की विशेषताओं का अनुपम प्रतीक है।

यह है हमारी दीपावली की सांस्कृतिक परम्परा, जिसमें पार्थिव दीप बुझे और हमने उनकी पावन स्मृतियों को अमरत्व प्रदान करने के लिये शताब्दियों–सहस्राब्दियों से मृत्तिका के दीप प्रज्वलित किये। ज्योति का विसर्जन अन्धकार में नहीं प्रकाश में ही होना चाहिए, आनन्द का पर्यवसान आनन्द में ही होना चाहिए। यही भारतीय संस्कृति का चरमोदकर्ष है।

प्रतिवर्ष दीपावली के अवसर पर भारतवर्ष के एक कोने से दूसरे कोने तक प्रकाशपुंज बिखेरने वाला यह पर्व हमारे देश की उस महान् सांस्कृतिक परम्परा का प्रतीक है जिसके प्राणोद्रेक से हम प्रत्येक युग में मानव संस्कृति पर छाने वाले सघन अन्धकार को पराजित करके ज्ञान एवं सत्य की पुण्य ज्योति विकीर्ण करते आये हैं। असत्य की उपेक्षा कर सत्य को समेटने की पिपासा, मृत्यु को ठुकरा कर जीवन को अमरत्व देने की सन्धि और अन्धकार को पराभूत कर ज्योति की दीपशिखायें प्रज्वलित करने का साहस सर्वप्रथम इस भारतभूमि पर, इस आर्यावर्त में ही जागृत हुआ, जिसका अनुसरण अब विश्व भर में होने लगा है।

385, साईट–1, विकासपुरी, नई दिल्ली–18

श्रीराम-भरत का भ्रातृ-प्रेम

-सुमित्रा मित्तल

सुत, दारा अरु लक्ष्मी पापी के भी होय।
सन्त समागम हरिभजन तुलसी दुर्लभ दोय।।

महाकवि सन्त तुलसीदास भी भगवान की भक्ति और सन्त पुरुषों की संगति के महत्व का वर्णन करते हुए कहते हैं कि इस नश्वर संसार में पुत्र, स्त्री और लक्ष्मी अर्थात् धन दौलत तो पापी व्यक्ति को भी प्राप्त हो जाती है। परन्तु सन्त पुरुषों का साथ और प्रभु भक्ति संसार में दुर्लभ है जो मनुष्य को बड़ी कठिनाई से प्राप्त होती है।

इसी श्रृंखला में तुलसीदास जी ने स्वरचित 'रामचरित मानस' में भरत जी के चरित्र का अनुपम, अद्वितीय, भक्ति से परिपूर्ण और अनुकरणीय वर्णन किया है जो इस संसार में विरला ही प्राप्त होता है। भरत जी भ्रातृ-प्रेम, सेवक भाव और गुरु भक्ति में अपार अटूट श्रद्धा रखते थे तथा त्याग और तपस्या की साक्षात् मूर्ति थे। इसके साथ-साथ श्री राम चरण में उनका तन-मन-धन सदैव अर्पित रहता था।

जिस समय श्री राम को वन जाने का आदेश प्राप्त हुआ उस समय भरत अपनी ननिहाल गए हुए थे। जैसे ही वह वहाँ से लौटकर महल में प्रवेश करते हैं शीघ्र ही माता कैकेयी आरती का थाल सजाकर उनके स्वागतार्थ उनके सम्मुख आती है। परन्तु उनका प्रसन्नता से युक्त आह्लादपूर्ण चेहरा भरत को प्रभावित नहीं कर सका। सर्वप्रथम उन्होंने अपने भाई श्री राम, माता सीता और भाई लक्ष्मण की कुशलता के विषय में पूछा।

जब माता कैकेयी ने उनको बताया कि उन्होंने उनके लिए राजगद्दी और श्री राम के लिए 14 वर्ष का वनवास उनके

पिता से माँग लिया है, तो वह यह सुनकर अत्यन्त दुःखी हो गए और अपनी माता से कुछ न कहकर सीधे माता कौशल्या के महल में गए। वहाँ माता कौशल्या संतप्त दशा में बैठी हुई थीं। स्वयं को निर्दोष बताते हुए श्री भरत ने कहा- हे माता, मैं वनाग्नि के समान हूँ। वह तो केवल वन को ही जलाती है परन्तु मैंने तो अपने सम्पूर्ण वंश का ही नाश कर दिया है।

भरत के विषादपूर्ण वचन सुनकर माता कौशल्या श्री राम के समान ही प्रेम करते हुए भरत को अपनी गोद में बिठाकर समझाती हैं कि हे पुत्र! राम धीर, गम्भीर हैं। वे समभाव से वनवासी वेश में वन गए हैं। उन्होंने अपने पिता के प्रण की रक्षा की है। सीता ने अपने पतिव्रत धर्म का पालन किया है और लक्ष्मण ने अपने सेवक धर्म का पालन किया है। इसी कारण से वे भी राम के साथ वन को गए हैं। पुनः हे भरत पुत्र! अब तुम ही अयोध्या नगरी का शासन करके अपने माता-पिता की आज्ञा का अनुसरण करो। यह सुनकर भरत को सान्त्वना प्राप्त हुई तत्पश्चात् वह पश्चाताप करते हुए कहने लगे।

जितना पाप माता-पिता अथवा पुत्र की हत्या करने से लगता हैं, विप्र नगर जलाता है, गौ-हत्या करता है, तो उसे जितना पाप लगता है उतना ही पाप मुझे भी लगे। वेद बेचने, धर्म बेचने से जितना पाप लगता है उतना ही पाप मुझे भी लगे। भरत के इस प्रकार पश्चात्ताप करने को सुनकर माता कौशल्या कहती हैं कि हे पुत्र! तुम और राम अभिन्न हो। यह तो विधाता का विधान है। इसी प्रकार समझाते-समझाते रात्रि व्यतीत हो जाती है और वशिष्ठ मुनि प्रवेश करते हैं। मुनि समझाते हुए कहते हैं कि हे पुत्र! राजा शोक करने योग्य नहीं है। वे महान् ज्ञानी, वेदों के ज्ञाता, सत्यव्रती,

नीतिज्ञ, महाराज थे, जिनका यश चहुँलोक में प्रसिद्ध है। उनका यश ब्रह्मा, विष्णु, महेश भी गाते हैं। राजा ने सत्य की रक्षा के लिए अपने प्राण त्याग किए हैं और तुम्हें राज्य दिया है। अतः अब तुम्हें राज्य ग्रहण करके उनके प्रण की रक्षा करनी चाहिए। इस पर भरत जी विनय पूर्वक कहते हैं कृपया यह बताइये–

1. मेरे पिता स्वर्ग में हैं और बड़े भाई श्री राम वन में हैं क्या राजगद्दी पर बैठना शोभा देगा?

2. मेरे विचार में मेरी रामचरण में रहने में ही भलाई है। मेरे जीवन का उद्देश्य माता सीता और श्री राम की सेवा करना ही है। वरना मेरा जीवन इसी प्रकार है जिस प्रकार ब्रह्मज्ञान के बिना वैराग्य।

3. आपको मुझसे मोह पैदा हो गया है। इसलिए ही मुझ कैकेयी के नीच, कुटिल व पापी पुत्र को राजगद्दी सौंप रहे हैं। उपरोक्त विवेचन और उदाहरणों से भरत जी के त्याग, तपस्या, भ्रातृ-स्नेह और वैराग्य के साक्षात् दर्शन होते हैं तथा भरत जैसी तड़पन और त्याग भावना से ही रामदर्शन हो सकते हैं।

मातु भरत के बचन मृदु सुनि पुनि उठी संभारि।
लिए उठाइ लगाइ उर लोचन मोचति बारि।।

इस प्रकार भरत के कोमल वचन सुनकर माता कौशल्या अपने को सम्भाल कर उठीं और भरत को उठाकर अपने हृदय से लगा लिया। जो भी अपने जीवन में भरत जैसा आचरण करेगा वह सदैव भगवान राम के हृदय में निवास करेगा और संसार में सर्वोच्च स्थान प्राप्त करेगा। इसीलिए इस युग में भी भरत के भ्रातृप्रेम के उदाहरण सर्वत्र विद्यमान हों, ऐसी अपेक्षा है।

19 एल्गिन रोड, इलाहाबाद (उ०प्र०)

आदित्य ब्रह्मचारी योगीराज ऋषि दयानन्द के प्रति अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द के हृदयोद्‌गार

–आचार्य दिनेशचन्द्र शास्त्री

महर्षि के सच्चे भक्त अनेक महात्मा संन्यासी हुए हैं उनमें से एक तपस्वी संन्यासी थे, अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज उनके आत्मा के उद्‌गार हैंः–

ऋषिवर! तुम्हें भौतिक शरीर त्यागे इकतालीस वर्ष हो चुके हैं, परन्तु तुम्हारी दिव्य मूर्ति मेरे हृदय पटल पर अब तक ज्यों की त्यों अंकित है। मेरे निर्बल हृदय के अतिरिक्त कौन मरणधर्मा मनुष्य जान सकता है कि कितनी बार गिरते–गिरते तुम्हारे स्मरण मात्र ने मेरी आत्मिक रक्षा की है। तुमने कितनी गिरी हुई आत्माओं की काया पलट दी, इसकी गणना कौन मनुष्य कर सकता है, परमात्मा के बिना जिनकी पवित्र गोद में तुम इस समय विचर रहे हो, कौन कह सकता है कि तुम्हारे उपदेशों से निकली हुई अग्नि ने संसार में प्रचलित कितने पापों को दग्ध कर दिया है? परन्तु अपने विषय में मैं कह सकता हूँ कि तुम्हारे सहवास ने मुझे कैसी गिरी हुई अवस्था से उठा कर सच्चे लाभ करने के योग्य बनाया। मैं क्या था इसे इस (कल्याण पथिक पुस्तक में) इस कहानी में मैंने कुछ छिपाया नहीं। मैं क्या बन गया और अब क्या हूँ? वह सब तुम्हारी कृपा का ही परिणाम है। इसलिए इससे बढ़कर मेरे पास तुम्हारी जन्म शताब्दी पर और कोई भेंट नहीं हो सकती कि तुम्हारा दिया आत्मिक जीवन मैं तुम्हें ही अर्पण करूँ। तुम वाणी द्वारा प्रचार

करने वाले तत्त्ववेत्ता ही न थे परन्तु जिन सच्चाइयों का तुम संसार में प्रचार करना चाहते थे उसको क्रिया में लाकर सिद्ध कर देना भी तुम्हारा ही काम था। भगवान कृष्ण की तरह तुम्हारे लिए भी तीनों लोकों में कोई कर्त्तव्य शेष नहीं रह गया था परन्तु तुमने मानव संसार को सीधा मार्ग दिखलाने के लिए कर्म की उपेक्षा नहीं की।

भगवन्! मैं तुम्हारा ऋणी हूँ, उस ऋण से मुक्त होना चाहता हूँ। इसलिए जिस परम पिता की असीम गोद में तुम परमानन्द का अनुभव कर रहे हो, उसी से प्रार्थना करता हूँ कि मुझे तुम्हारा सच्चा शिष्य बनने की शक्ति प्रदान करे। महर्षि के जीवन व वेद सन्देश के प्रचार की सेवा में मैंने अपने तन, मन, धन का आत्म समर्पण कर दिया। महात्मा मुन्शीराम जी से स्वामी श्रद्धानन्द सच्चे ऋषि भक्त, तपस्वी, संन्यासी बन गये। श्री महाराज के जीवन और उत्तम उपदेशों से सबका लाभ उठाकर जीवन को श्रेष्ठ बनाना चाहिए। ऋषिवर के मन्तव्यों के प्रचार–प्रसार में जीवन समर्पण करें जिससे मनुष्य जीवन सफल हो सके।

'Brahmarpan' gratefully acknowledges with thanks receipt of Rs.11,000/- (Eleven Thousands Only) from Thakur Vikram Singh Trust, Rashtra Nirman Party, A-41 (2nd Floor) Lajpat Nagar-II, near Metro Station, New Delhi-110024. The Trust lends support to Arsh Publications, Vedic Scholars engaged in spreading the message of Vedas.

बापू थे समय के पाबन्द (1)

बापू के साथ अपने संस्मरणों में काका साहेब कालेलकर ने एक घटना का उल्लेख करते हुए लिखा है कि एक बार बापू के साथ उन्हें मुम्बई जाना था। प्रस्थान का समय दूसरे दिन छह बजे निर्धारित हुआ। काका साहेब एक मिनट विलंब से पहुँचे तो देखा कमरा खाली और बापू मय अपने सामान के तेजी से आगे बढ़े चले जा रहे हैं। वह दौड़कर उनके पास पहुँचे और बोले, "आपने मेरी प्रतीक्षा नहीं की।" बापू ने प्रतीक्षा करने की कोई आवश्यकता नहीं दिखाई। उनका मानना था कि दूसरा विलम्ब करे पर तुम स्वयं विलंब न करो। किसी भी निध ारित कार्यक्रम में वह समय से पहुँचना परम आवश्यक मानते थे। भले ही इसके लिए जेठ-बैसाख की कड़ी धूप अथवा तेज वर्षा में भीगना क्यों न पड़े। सवारी के न रहने अथवा बिगड़ जाने की स्थिति में वह पैदल ही गंतव्य की ओर बढ़ चलते थे। दूसरों को प्रतीक्षा करवाना उन्हें स्वीकार्य नहीं था। इसे भी वह एक प्रकार की हिंसा ही मानते थे।

यही नियम वह अपने मिलने आने वाले लोगों के साथ भी निभाते थे। यदि किसी को मुलाकात के लिए दस मिनट आवंटित हुए हैं किन्तु उतने समय में उसकी बात पूरी नहीं हो पाई तो वह वार्ता को बीच में अधूरा छोड़कर उसे और समय लेने के लिए कहते। एक बार सुप्रसिद्ध पत्रकार लुई फिशर समय लेकर उनसे मिलने के लिए आये। वार्ता में कब समय पूरा हो गया उन्हें ध्यान ही नहीं रहा पर बापू ने उन्हें घड़ी दिखाकर समय का बोध तो कराया ही, साथ ही आश्चर्यचकित भी कर दिया।

इसी तरह से समयाभाव का रोना रोते हुए किसी आश्रमवासी ने बापू को बताया कि कार्याधिक्य होने के कारण अब वह अपनी रुचि के कार्य संपन्न करने के लिए समय ही नहीं निकाल पाते हैं। बापू उनकी बात सुनकर हँस दिए और फिर उन्हें समझाते हुए बोले, "प्रातःकाल से ही ध्यान रखो कि एक भी पल बर्बाद न होने पाए। ऐसा करके तुम सुगमता से 2-3 घंटे का समय निकाल लोगे जिसमें करने के लिए तुम्हारे पास कोई भी कार्य शेष नहीं रहेगा। इस अतिरिक्त समय को तुम स्वेच्छा से अपने रुचिकर कार्यों में लगा सकते हो।

बापू का त्याग का संदेश (2)

–मुकेश शर्मा

महात्मा गाँधी उन दिनों दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद के खिलाफ लड़ाई लड़ रहे थे। इस दौरान उनकी मुलाकात केलन बैक नाम के एक गोरे से हुई। केलन गाँधीजी से बेहद प्रभावित हुए और हमेशा के लिए उनके अनुयायी बन गए। वे धनवान थे और अकेले ही रहते थे। पहली बार जब गाँधीजी जेल गए तो उनकी अनुपस्थिति में उन्होंने गाँधीजी के आंदोलन को संभाला और उनकी रिहाई के लिए अभियान छेड़ दिया। हफ्ते भर बाद गाँधीजी की रिहाई का आदेश हो गया। यह सुनकर केलन बैक को बड़ी खुशी हुई। गाँधीजी की रिहाई के दिन वह सबसे महँगी कार रॉल्स रॉयस खरीद कर जेल के बाहर खड़े हो गए। गाँधीजी यह देखकर अचंभे में पड़ गए। उन्होंने पूछा, 'यह गाड़ी किसके लिए है?' केलन ने कहा, 'इसमें बैठाकर आपको घर ले जाऊँगा।' गाँधीजी ने कहा, 'केलन, तुम गाड़ी से चलो। मैं पीछे–पीछे आता हूँ।' इतना कह कर वह आगे बढ़ गए। केलन बैक गाँधीजी का आशय समझ गए। उन्होंने गाँधीजी को रोकते हुए कहा, 'आप थोड़ी देर इंतजार कीजिए। मैं अभी आता हूँ। फिर दोनों साथ–साथ चलेंगे।' यह कह कर केलन बैक कार के सेकंड हैंड मार्केट पहुँचे। उन्होंने पंद्रह हजार रुपये का नुकसान सह कर उस शानदार गाड़ी को उसी समय बेच डाला।

इस बीच गाँधी जी जेल के सामने उनकी प्रतीक्षा करते बैठे रहे। गाड़ी बेच कर पैदल ही लौटने पर केलन ने कहा, 'अब तो ठीक है न गाँधीजी।' गाँधीजी ने मुस्कुराकर कहा, 'हाँ, अब बिल्कुल ठीक है। यह मत भूलो कि हम गरीब देश के गरीब इंसान हैं। हमारी लड़ाई गरीबों के लिए है। उनके लिए ही हमें जेल जाना पड़ा। यहाँ हमें कुली बैरिस्टर कहा जाता है। हमें यह शोभा नहीं देता कि हम इतनी महँगी गाड़ी की सवारी करें।' इसके बाद दोनों मित्र पैदल चल कर एक घंटे में आवास पर पहुँचे।

गरीबी में स्वाभिमान (1)
(लाल बहादुर शास्त्री-एक प्रसंग)

-मुकेश शर्मा

नाव गंगा के इस पार खड़ी है। यात्रियों से लगभग भर चुकी है। रामनगर के लिए ही वाली है, बस एक-दो सवारी चाहिए। वहीं बगल में एक नवयुवक खड़ा है। नाविक उसे पहचानता है। बोलता है, 'आ जाओ, खड़े क्यों हो, क्या रामनगर नहीं जाना?' तुम्हारी नाव से नहीं जा सकता।' क्यों भैया, रोज तो इसी नाव से आते-जाते हो, आज क्या बात हो गई? 'आज मेरे पास उतराई देने के लिए पैसे नहीं है। तुम जाओ।' अरे! यह भी कोई बात हुई। आज नहीं, तो कल दे देना।' नवयुवक ने सोचा, बड़ी मुश्किल से तो माँ मेरी पढ़ाई का खर्च जुटाती है। कल भी यदि पैसे का प्रबंध नहीं हुआ, तो कहाँ से दूँगा? उसने नाविक से कहा, 'तुम ले जाओ नौका, मैं नहीं जाने वाला।' वह अपनी किताब कॉपियाँ एक हाथ में ऊपर उठा लेता है और छपाक नदी में कूद जाता है। नाविक देखता ही रह जाता है। उसके मुख से निकला, 'अजीब मनमौजी लड़का है।' छप-छप करते नवयुवक गंगा नदी पार कर जाता है। रामनगर के तट पर अपनी किताबें रखकर कपड़े निचोड़ता है। घर पहुँचने पर माँ रामदुलारी इस हालत में अपने बेटे को देख चिंतित हो उठीं। 'अरे! तुम्हारे कपड़े तो भीगे हैं। जल्दी उतारो। यह हुआ कैसे? नवयुवक ने सारी बात बतलाते हुए कहा, 'तुम्हीं बोलो माँ, अपनी मजबूरी मल्लाह को क्यों बतलाता? फिर वह बेचारा तो खुद गरीब आदमी है। उसकी नाव पर बिना उतराई दिए बैठना कहाँ तक उचित था? यही सोचकर मैं नाव पर नहीं चढ़ा। गंगा पार करके आया हूँ।' माँ ने पुत्र को सीने से लगाते हुए कहा, 'बेटा, तू जरूर एक दिन बड़ा आदमी बनेगा।' वह नवयुवक कोई और नहीं लाल बहादुर शास्त्री थे, जो देश के प्रधानमंत्री बने और 18 महीनों में ही राष्ट्र को प्रगति की राह दिखाई।

अंग्रेजी में फेल (2)
(शास्त्री जी का स्वाभिमान)

-विनोद कुमार यादव

सन् 1965 में अमेरिका ने भारत को गेहूँ का आयात बंद कर दिया तो तत्कालीन प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री ने दिल्ली के रामलीला मैदान में आयोजित एक विशाल रैली की। रैली में वह बोले, 'मेरे प्रिय भारतवासियों, एक तरफ पड़ोसी देश से सीमा पर युद्ध चल रहा है। दूसरी ओर अमेरिका ने दबाव बनाने के लिए हमें गेहूँ भेजना बंद कर दिया है। हमने अपने स्वाभिमान की रक्षा के लिए इस चुनौती को स्वीकार किया है। मैं देश के प्रत्येक नागरिक से निवेदन करता हूँ कि वह फिजूलखर्ची बंद कर दे, और देश की अर्थव्यवस्था को सुचारू बनाए रखने के लिए सप्ताह में एक दिन उपवास रखे।' फिर क्या था, लोगों ने सप्ताह में एक दिन उपवास रखना आरंभ कर दिया। शास्त्रीजी भी हर सोमवार व्रत रखते थे। शास्त्री जी की पत्नी ललिता देवी प्रायः बीमार रहती थीं, इसलिए उनके घरेलू कार्य, काम वाली बाई करती थी। शास्त्रीजी ने देशहित की खातिर बाई को सेवामुक्त कर दिया और घर का काम खुद करने लगे। शास्त्रीजी अपने कपड़े स्वयं धोते थे। उनके पास केवल दो जोड़ी धोती-कुर्ता ही थे। एक दिन शास्त्रीजी की धोती कपड़े धोते समय फट गई। पत्नी बोली, 'आप नई धोती खरीद लाइए। 'शास्त्रीजी ने कहा, 'मैं नई धोती खरीदकर लाने की कल्पना भी नहीं कर सकता, बेहतर होगा कि आप सुई धागा लेकर इसे सिल दो।' उनके घर पर बच्चों को अंग्रेजी पढ़ाने के लिए एक ट्यूटर भी आया करता था। शास्त्रीजी ने जब उसे भी ट्यूशन हटाने के लिए कहा तो वह कहने लगा, 'बच्चे तो अंग्रेजी में फेल हो जाएँगे।' शास्त्रीजी ने उसे समझाया, "देश के हजारों बच्चे अंग्रेजी में फेल होते हैं, अगर मेरे बच्चे भी फेल हो जाएँगे तो क्या। अंग्रेजी में फेल होना स्वाभाविक है क्योंकि यह हमारी मातृभाषा भी नहीं है।' आज शास्त्रीजी हमारे बीच नहीं हैं, किन्तु उनके मूल्य व आदर्श सदैव साथ रहेंगे।

रामायण : संस्कृति की विजय-गाथा

-स्व. स्वामी सत्यम

आर्य कौन? वेदों के अनुसार सृष्टि-रचना के बाद मानवों का जन्म हुआ, उस समय जाति में दो ही वर्ग थे-आर्य एवं शूद्र या दस्यु। "उत शूद्रे उत आर्ये", "शूद्रार्या वसृज्येताम्", विजानीह्यार्यान्ये च दस्यवः"। आर्य शब्द की व्याख्या करते हुए श्री यास्क मुनि ने कहा- "आर्यः ईश्वर-पुत्रः" - आर्य वह है जो ईश्वर का पुत्र है। 'Son of God' अथवा 'Children of God' की परिपाटी का मूल यही आर्य शब्द है। प्रश्न हो सकता है कि उसके पुत्र तो सभी हैं। यहाँ "पुत्र" शब्द सामान्य अर्थ नहीं है, पुत्र का सही अर्थ है- "पुन्नाम नरकं, तस्मात् त्रायते इति पुत्रः" - जो अपने पिता को अपयश रूपी नरक से बचाए वह पुत्र है। इसी अर्थ में श्री यास्क मुनि ने पुत्र शब्द का प्रयोग किया है। परमात्मा के पुत्र वे हैं जो उसकी आज्ञा में रहकर चलते हुए उसके नाम को यशस्वी बनाएँ। परमात्मा की आज्ञा का दूसरा नाम है वेद। वेद मानव समाज का संविधान है जो परमात्मा ने मनुष्य मात्र को दिया है। जो इस वेद को अपने आचरण में लाते हैं वे धार्मिक हैं- "आचारः परमो धर्मः" वेदज्ञ विद्वान् हैं- "यस्तु क्रियावान् पुरुषः स विद्वान्", ईश्वर-भक्त है और परमात्मा के सच्चे पुत्र हैं। इन लोगों का आचार-व्यवहार देखकर अन्य लोगों की परमात्मा के प्रति आस्था और श्रद्धा बढ़ती है। यही है ऋग्वेद के प्रथम मंत्र के 'अग्निमीळे' का सत्य अर्थ। परमात्मा का स्तवन शब्दों में नहीं, भक्त के प्रत्येक कार्य और आचरण में परिलक्षित होता है। ऐसा व्यक्ति ही आर्य है। आर्य हमेशा ज्योति को आगे रखकर चलते हैं- "आर्य ज्योतिरग्राः"। ज्योति ही आर्यों का लक्ष्य होती है, उनका पूरा जीवन ज्योतिर्मय होता है। इसके विपरीत आचरण वाले शूद्र हैं। आर्य बाहर से भारत में नहीं आए, अपितु भारत में बाहर की भूमियों में जाकर बसे। उनमें कुछ थे "कुर्वाणः"

जिन्होंने अरब में "नमस्"-नमाज-और "रामध्यान" Ramadhan को जन्म दिया। कुछ जो कालान्तरेण तामसिक बन गए थे "शयानः" (China) कहलाए, कुछ जप को ही महत्त्व देते थे वे जपानः कहलाए। जो उनमें शर्मन् थे स्वस्ति के उपासक, उन्होंने "शर्मण्य" (Germany) की सृष्टि की। महर्षि गौतम के शिष्यों ने अपने आचार्य का नाम प्रसिद्ध करने के लिए "गौतमालय" (Gwatemala) की स्थापना की जबकि महर्षि कणाद के शिष्यों ने "कणादाः" (Canada) की स्थापना की। इस प्रकार यदि हम सब नामों का विश्लेषण करें तो हमें उनमें से लुप्त सरस्वती की धारा झाँकती दिखाई देगी।

संस्कृति और संकृति : संस्कृत शब्दों में एक-एक अक्षर सार्थक है। संस्कृति में से "स" निकाल दिया जाए तो संकृति बन जाता है जिसका अर्थ है संकर। संस्कृति सात्त्विकता का परिणाम है और संकृति तामसिकता और अज्ञान का - 'संकरो नरकायैव'। आज के युग की अशांति व नानाविध समस्याओं का मूल यही संस्कृति का अभाव तथा संकृति की प्रधानता है। संस्कृति आत्मोन्नति का परिणाम है संस्कृति जिसमें होती है वह आर्य होता है। इसलिए आसुरी संस्कृति कहना सर्वथा गलत है। असुरों में संस्कृति का नहीं संकृति होती है, इसीलिए गीता ने भी दैवी संपद् और आसुरी संपद् नाम से ही उन्हें पुकारा है। संस्कृति और आर्यत्व दोनों अभिन्न हैं। संकृति का कारण है बुद्धि एवं चित्त विक्षेप। यह चित्तविक्षेप ब्राह्मण में भी हो सकता है। जब कोई शूद्र सत्संसर्ग में आकर संस्कृतिमान् बन जाता है वह आर्य बन जाता है, इसके विपरीत जब कोई आर्य संस्कृतिमान् बन जाता है वह आर्य बन जाता है। इसके विपरीत जब कोई आर्य संस्कृतिवान् बन जाता हैं या अनार्य-अनाड़ी-बन जाता है- "शूद्रो ब्राह्मणतामेति ब्राह्मणश्चैति शूद्रताम्।" इस तरह वैदिक मर्यादा के अनुसार आर्य, शूद्र, ब्राह्मण ये सभी जाती नहीं हैं, अपितु गुण तथा कर्म के आधार पर दिए गए विशेषण

हैं। रामायण में श्रीराम का चरित्र एक सच्चे आर्य का चित्र है उनके एक-एक आचरण में आर्यत्व ओतप्रोत है। धर्मज्ञ, सत्यसंघ, प्रजाहितकारी, शीलवान, शांत, दान्त, अनसूय, श्लक्ष्ण, कृतज्ञ, विजितेन्द्रिय, मृदु, स्थिरचित्त, प्रियवादी, सत्यवादी, अदीनात्मा, आदि सभी गुण श्रीराम के आर्यत्व के प्रतीक हैं।

महर्षि विश्वामित्र अयोध्या क्यों आए? श्रीराम को महाराज दशरथ ने अपनी बुद्धि के अनुसार अच्छी से अच्छी शिक्षा दिलवाई, परन्तु महर्षि विश्वामित्र की दृष्टि से वह बहुत कम थी। उस समय आर्यावर्त के दक्षिणापथ से संकृति की एक बहुत बड़ी बाढ़ आ रही थी। उसका मुकाबला करना बहुत जरूरी था। यह काम वही कर सकता था जो सच्चे अर्थों में आर्य हो, संस्कृतिमान् हो। इसके लिए श्रीराम को और भी बहुत कुछ सीखना आवश्यक था। महर्षि राम को न केवल अस्त्र-शस्त्र विद्या में ही पारंगत बनाना चाहते थे, अपितु देश के भूगोल व इतिहास का प्रत्यक्ष ज्ञान कराने के साथ-साथ वे उन्हें वैदिक संस्कृति का भी पूर्ण प्रशिक्षण देना चाहते थे जिससे वे उस संकृति के साथ भविष्य में होने वाले संघर्ष में कभी पराजित न हों। यह संकृति थी लंकाधीश रावण की। महर्षि वाल्मीकि ने लिखा है- "जब श्री हनुमान जी लंका में गए तो उन्होंने देखा कि लंकानिवासी मांस और शोणित के भक्षक हैं, अर्ध रात्रि के उस समय में राजमहल मद्यपान व मांस की गंध से भरा हुआ है, स्त्रियाँ निर्वसन होकर इधर-उधर अचेतनावस्था में लेटी पड़ी हैं, और रावण जो ब्राह्मण के प्रधानचिह्न सुवर्ण यज्ञोपवीत, चंदन-लेप तथा कर्ण-कुंडल आदि से अत्यंत सुशोभित हो रहा था, मद्यपान तथा रतिक्रीड़ा के बाद थक कर घोर निद्रा में पड़ा सो रहा है।" ये सभी लक्षण इस बात का संकेत करते हैं कि रावण ब्राह्मण होकर भी वेद-विरुद्ध मार्ग पर चल रहा था जो वेदों के विपरीत होने के कारण बाद में वाममार्ग कहलाया। इस वाममार्गी संकृति का

आर्यावर्त में प्रचार करके उस देश की पवित्र संस्कृति का विध्वंस कर उसे अपने शासन के अंदर ले आना ही रावण का उद्देश्य था। (ठीक वैसे ही जैसे आक्रामक मुगलों और अंग्रेजों ने किया)। धर्म व संस्कृति देश की रीढ़ होती है, उसे समाप्त कर दो तो देश अर्ध-जीवित हो जाता है और तब उसे कोई भी आसानी से अपने पैरों तले रौंद सकता है। इसी लक्ष्य को सामने रखकर रावण ने मारीच और सुबाहु उत्तरापथ के सिद्धाश्रम में भेजे थे ताकि वे माँस और खून बरसाकर महर्षि विश्वामित्र के यज्ञ को विध्वंस कर दें और संस्कृति की विध्वंस-लीला प्रारंभ कर दें। बाद में जाकर इस वाममार्ग ने इस पवित्र यज्ञ के रूप का विध्वंस किया, जिसके फलस्वरूप अश्वमेघ आदि रूपों में घोड़े आदि पशुओं को मारकर उनके माँस व रक्त की आहुति दी जाने लगी। पर, श्रीराम के समय में यह पद्धति नहीं थी और इसे अवैदिक समझा जाता था, अन्यथा महर्षि उसका विरोध न कर खुश होते कि उन्हें मुफ्त में ही यह सब मिल रहा है। महर्षि ने इस बढ़ते हुए संक्रामक रोग को अपनी दिव्य दृष्टि से देख लिया था और इस बात को महर्षि वशिष्ठ भी जानते थे, पर दशरथ को इन सब बातों की गंध भी नहीं थी। इसीलिए महर्षि विश्वामित्र अयोध्या आकर श्रीराम को अपने साथ ले गए। दूसरी ओर 14 वर्ष के वनवास में श्रीराम को मौका मिला कि दक्षिणापथ इस रोग से मुक्त कर दें, और सीताहरण ने तो उन्हें लंका जाकर इस संकृति-रोग के मूल को ही नष्ट कर देने का स्वर्णिम अवसर प्रदान किया और उन्होंने रावण को समाप्त करके उसके स्थान पर आर्य विभीषण को बैठाकर फिर से लंका में आर्य संस्कृति की स्थापना की। कभी-कभी जिसे हम बुरी घटना समझते हैं उसका परिणाम अच्छा निकल आता है। इस प्रकार रामायण आर्य-द्रविड़-संघर्ष की कहानी नहीं है, जैसा कि कुछ लोग सोचते हैं, अपितु संस्कृति पर संकृति की विजय की गाथा है।

INTERNATIONAL ARYA MAHASAMMELAN,MYANMAR,6th-8th OCTOBER,2017

–B.D.UKHUL

A group of 8 persons from C-3, Janakpuri Aryasamaj resumed their journey to attend this Arya Mahasammelan on 3rd October night by Malaysia Airlines reaching Kualalumpur in the morning to catch another flight for Yangon(Rangoon). Thereafter we took another flight to reach Nyaung Shwe Township, Southern Shan State,where we checked into Inle resort & Spa. After breakfast we set out on an exciting boat ride in historical Inle lake of Myanmar which is 2950 feet above the sea level,12 miles long(S-N) and 4 miles wide((E-W).Its deapth varies from 12-20 ft.in rainy season. It was most adventrous ride in batches and we landed at the site of a Pagoda-a Buddhist temple to go round and observed devotees engaged in meditation. Afterwards we took another boat to see a floating village from where we resumed our journey by bus for Mandalay,enroute we were taken to see magnificent Shwedagon Pagoda containing relics of Buddha,originally built in 588 B.C.and maintained by various kings and lastly it was rebuilt to a height of 326 ft.(99.36metres)by king Sinbyushin in 1774. At nightfall, we checked in at Eastern Palace Hotel.

On way to the conference venue we came across Mandalay jail surrounded by a lake all around where Indian freedom fighters namely, Bal Ganga Dhar Tilak,Lala Lajpat Rai and Subhash Chandra Bose were imprisoned by the Britishers. Now, It is no more a jail but housed by Myanmar military. The conference started at Ambika Mandir premises with Yajna at the improvised place mostly attended by guests from Myanmar and others followed by the flag hoisting of Myanmar and Om Dhwaj, attended by the Ambassador of India in Myanmar, Shri Vikram Misry,Shri Nandan Singh, Indian Consulate General in Mandalay, Shri Ashok Kshetrapal,President of Aryaprtinidhi Sabha,Myanmar, Shri Suresh Chandra Arya, President of Arya Sarvdeshik Sabha,Delhi , Arya Sanyasis and delegates.

Inaugral session of the conference started in the main pandal with an impressive stage. The proceedings started with lighting of lamp by the Chief Minister of Mandalay with his colleagues,Arya sanyasis,S/shri Ashok Kshetrapal,Vikram Misry, Nandan Singh and other honoured guests. The programme commenced with an invocation "Krinvanto Vishvam Aryam" presented by a joint group of Myanmar followed by a Welcome song. The pandal was overflowing and it was revealed that about 160 delegates had arrived from India and about 50 delegates were from other counties, Numerous delegates had arrived from all over Myanmar.We learnt that the first Aryasamaj in Burma was found in Mandalay in 1897 and the next one in Yangon in1899. The separation of Burma in 1937 was a setback for the Aryasamaj and the onset of the Second World War completely disrupted its activities. However in 1937 Aryasamaj Pratinidhi Sabha, Myanmar was formed representing Aryasamajs from 22 places all over Myanmar. Shri Prakash Arya accorded a formal welcome to all the delegates and gave a brief background of initial efforts in planning of the conference with active support of Myanmar team led by Shri Ashok Kshetrapal. Sw. Sumedhanandji addressed the audience to mention how the leading lights of Myanmar, namely, Dr. Gurudutt Surin, Lakshman dass, Kriparam Vidyarthi,

Atmaramji,Prabhu Dayalji found the Ist Aryasamaj. He referred to the impact of teachings of Swami Dayanand all around Myanmar since it was also part of India at that time,Shri Vikram Misry Indian Ambassador mentioned about growing relations with Myanmar, founding of Myanmar Institute of Information and Technology.co-operation in building roads, Agriculture, Education etc. He also mentioned about his education in a DAV School,Srinagar learning Gayatri mantra and about Aryasamaj.. Counsellate General of India Shri Nandan Singh stated that they had put up a stall to facilitate Myanmar people to learn about higher education/scholarship facilities available in India. Swami Dharmanandji of Amarsena-Bhuvneshwar Gurukul delivered an inspiring address mentioning about the visit of Sw.Swatantrananda to Burma on two occasions and spoke highly of humility, gentleness and sincerity among the Burmese all around. Lastly ShriBajranglal Sharma of Sanatan Dharma Swayamsevak Sangh also spoke about the role of Aryasamaj and underlined that its path leads to our ultimate goal. Aternoon session was that of VEDIC SAMMELAN presided by Ach. Dharmpalji. Ach. Anand Kumarji talked about Ved ki Vyapakta, Prof. Omkarji underlined the importance of Yajna to attain happiness.Dr. Somdevji spoke about the facets of dharma(dharm kaisa hona chahiye) mentioning about founding of Aryasamaj by Sw.Dayanand Saraswati in1875 and elaborated this subject. Ach. Sanat Kumar talked about Science in Vedas and referred to a fact that numerous manuscrips on this topic were available in British Library(London) and Munich in Germany. He underlined that GOD was the Greatest scientist.He dealt with aspect of creation of the universe,Vedic Psychology,Vedic Technology,Bhardwaj's Viman Shastra etc. He mentioned about metallurgical science and referred to Kollur Iron pillar in Karnataka 9.7metre tall,weighing 500kg. is a testimony of ancient Indian metallurgy., Indian Architecture was also noteworthy. A booklet entitled "BHAJANMALA" written by Smt.Santosh Devi Narula was also released on this occasion Evening session was devoted to YOUTH i.e. YUVA SAMMELAN,presided by Sw. Dev Vrat, Delhi .Shri Vishesh Narula, President, Aryasamaj Mandalay gave a brief account of Arya Kumar and Kumaris and their active participation was quite visible and appreciable during the conference. Shri Hansmukhbhai Parmar from Aryasamaj Tankara referred to their activities and Bhai Kishanlal ji Arya,Secretary, Mahrishi Dayanand Saraswati Smriti Bhavan Nyas,Jodhpur also gave an inspiring address stating that Swamiji spent last four and half months of his life at that place (from 31.05.1883-16.10.1883) and now a befitting memorial has been built there to perpetuate memory and work of Swamiji.

Later,in the evening a mass Yajna was conducted by 100 aryajans from various parts of Myanmar presided by Acharya Nandita Shastri of Varanasi and assisted by Shri Vinay Arya and all participants pledged to continue the performance of yajna in their routine life and further spread this movement. On 7th October after morning Yajna, the session started with a talk on Yajna by Ach. Gyaneshwararya of Vanprastha Ashram, Rojar (Gujrat) who described it as the Shreshthtam karm i.e. sublime duty of a human being. He highlighted that we cannot live without air and the yajna helps us to purify the environment which is need of the hour. Shri Chanderdutt Verma presented a swagat geet- welcome song. Shri Harish Varshnay of Canada presided over the session. Smt.Urmila Sachdeva from Newzealand talked

about their experience in Ved prachar.Shri Dhanup Chand of Mauritius mentioned about formation of Aryasamaj in 1903 and there are now 400 Aryasamajs doing useful work in running orphanages,sr.citizen homes, Hindi teaching besides arya prachar and yajnas by committed trained purohits.He however mentioned that Hindu population has now reduced from 52% to 48%due to modern influences.Dr. Sandhu from London gave a brief account of Aryasamaj there,when a church building was bought in 1978 and the Aryasamaj opened in 1982 where satsang is held on Sundays observing strict timings. Dr.Vachnonidhi from Gandhidham also described about the activities of Gandhidham where young victims of earthquake were provided shelter and doing a great service to the society. In the afternoon Mahila Sammelan was held chaired by Ach.Nandita Shastri and there was enthusiastic participation by lady delegates mostly from Burma. Evening session was devoted to ARYA SIDDHANT i.e. Aryan Principles. Swami Dev Vrata presided over the session and first of all Dr.Somdev Shastri talked about Yajna and its importance; Shri Ram Pravesh Verma gave a talk on Dharma and quoted Tagore to say that religion is to touch the truth and truth is reality of universe implying that you cannot see the reality but you can feel it.He also referred to ten tenats of Dharma given by Manu; Ach. Satyakam Sharma, Delhi highlighted the Vedic edict of Manur-bhav by inculcating sanskars and by coordinating adhyatamvad and bhautikvad;Ach. Ramkishen Shastri from Haridwar talked about Ishwar ka satya swaroop and narrated his personal experience under Sw.Prakashananda;Ach.Sanat Kumar described about his experiments on Yajna with help of slides and mentioned that there were 24 types of yajnas from Agnihotra to Ashvamedha yaga having rewarding effects for mankind and termed Yagya as Universal Science.

On 8th October after havan, the concluding session was held at the main pandal where overall stock of the proceedings was taken. Swami Dev Vrata offered his services for training of Aryaveers to prepare youth to follow the vedic path and Sarvdeshik sabha even offered facilities to train and educate youth in Gurukuls in India. Shri Ashok Kshetrapal, President of the Aryapratinidhi Sabha, Myanmar was applauded for wonderful arrangements made for the delegates and his young colleagues and mahila volunteers presented unique example of devoted services in serving meals to the delegates and looking after comforts of the participants. All foreign and local delegates were honoured by presentation of a souveneir and a participation certificate.It may be pertinent to add here that now Mandalay has a 6-storey Artyasamaj(DAV) building equipped with latest techniques and one impressive Central Aryasamaj Mandir. Burmese translation of Satyarthprakash was done by a Buddhist Bhikshu Bante-u-keertimak in 1958. Some notable scholars who visited Myanmar: Mehta Jaimuni,Kunwar Sukhpal,Dr.ChiranjeeviBhardwaj,Sw.Swatantrananda,Sw.Brahmananda,Shri Satyavrat Siddhantlankar.Shri Vishwanath Vedalankar,Pt.Ganga Prasad Upadhyaya,Mahatma Anand Swamiji,Swami Dhruvanandji.It was noteworthy that a brief history of Aryasamaj in Myanmar was published and distributed on this occasion. A booklet entitled 21 of years Aryasatsang Mandal, Mandalay was also published underlining their activities.

C2A/58,Janakpuri, New Delhi-110058
Tel. 9313749812

कन्याएँ कितनी महिमामयी?
(नवरात्रों में कन्याओं को सम्मान दिया जाता है)

–प्रियवीर हेमाइना

कन्याएँ कितनी महिमामयी जो सँवारती दो कुलों को।
कन्याएँ कितना प्यारा धन, जो न रुचता कुछ बुरे कुलों को।।
दुर्जन करते इनकी हत्या, लोक में आने से भी पूर्व।
वे न समझते इनकी महिमा, प्रभु ने जो दी इन्हें अपूर्व।।
दिया प्रभु ने कन्याओं को, "मातृशक्ति" का शुभ वरदान।
भर दिया हृदय में इनके दया ममता का अनुपम दान।।

विनम्रता और कोमलता में, क्या कोई है इनके समान?
बसते हैं बस वहीं देवता, जहाँ होता इनका सम्मान।।
जहाँ न मिलता इनको सम्मान, क्रियाएँ सभी होती निष्फल।
कोई भी देश न देख सके, कन्याओं के बिना सुन्दरकल।।
हा! पुत्रियों के जन्म से हम, क्यों हैं डूबते शोक में?
यदि होवे न इनका जन्म, तो कैसे होंवे पुत्र लोक में?

यदि देवी देवकी न होती, कृष्ण-सी आत्मा पाते कहाँ से?
उस योगिराज की गीता का, वह ज्ञान हम पाते कहाँ से?
यदि जीजाबाई न होती, क्या वीर शिवाजी हम पाते?
यदि लक्ष्मीबाई न होती, तो मर्दानी का यश कहाँ से पाते?
आदर्श माता ने ही एक, दिया था हमें देव दयानन्द।
जिसने वैदिक शिक्षाओं से, दिया जन-जन को सौख्यानन्द।।

विद्यावती न होती यदि, मिल पाता क्या हमें वह सिंह।
इतिहास में स्वाधीनता के लिए है सुनाम जिसका भगतसिंह।।
नहीं लोक में होतीं यदि माता, रामदुलारी यहाँ।
वह लालबहादुर शास्त्री-सा, वह लाल महान् मिलता कहाँ?
बदलो अपनी निकृष्ट सोच, मानो अमूल्यतम कन्या को।
कन्या भ्रूण हत्या पाप, पाओ न नष्ट कर कन्या को।।
कन्या भ्रूण हत्या करके, क्यों पाप के भागी बनते हो?
ईश्वर की न्याय-व्यवस्था में, क्यों दण्ड के भागी बनते हो?

318, विपिन गार्डन, नई दिल्ली–110059
मोबाईल– 7503070674

Date of Pubn. : 31.10.2017 Posted at - NIE - H.O. Postal Date : 2-3 Nov. 2017
RNI Reg. No. DELBIL/2007/22062 Postal Regd. No. DL(W) 10/2143/2017-2019

**अग्निरस्मि जन्मना जातवेदा घृतं मे चक्षुरमृतं म आसन्।
अर्कस्त्रिधातु रजसो विमानोऽजस्रो धर्मो हविरस्मि नाम।।**

(यजु.18/66)

ऋषि–देवश्रवो देववाता, देवता–अग्निः, छन्द–त्रिष्टुप्

अर्थ–अग्नि मुझमें जन्म से है और मैं इस प्रारंभिक ज्ञान से निरन्तर ज्ञान प्राप्त करता रहूँ। मेरी चक्षु (घृत) प्रकाश ग्रहण करने वाली हों, मेरी वाणी मधुर हो। मेरा मन आराधना के लिए हो, मेरा मस्तिष्क ज्ञान के लिए हो और शरीर उत्तम कर्मों के लिए हो। हे ईश्वर! मेरे ज्ञान में वृद्धि करो और मेरी वाणी को मधुर करो।

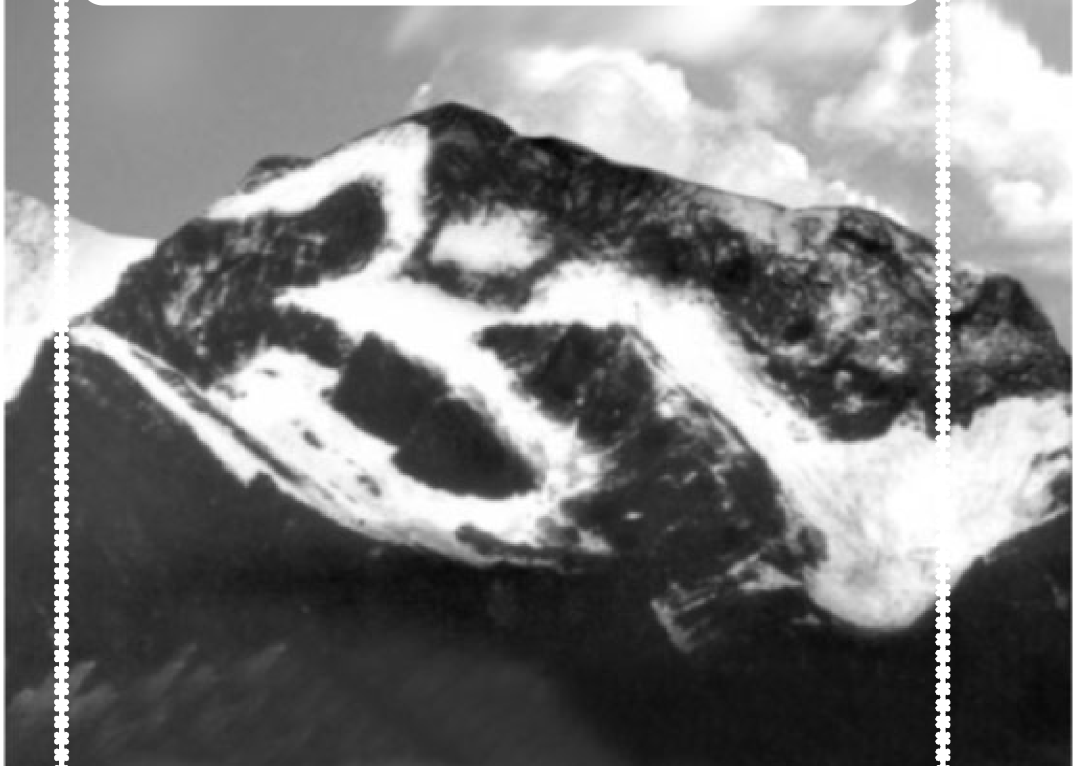

The fire (knowledge) is in me since my birth. With the initial knowledge, I keep acquiring more knowledge continuously. The light (butter) is my eye and nector (sweetness) is my mouth. man (मन) Mind is for adoration. Mind is for knowledge and body to do noble deeds. O God! get me knowledge and sweet my speech.

Printed by - Friendsprintofast, New Delhi-58